नेहरू के सांविधानिक विचार में जनवाद की धारणा

अनिता पासी*

जनवादी लोकतन्त्र के प्रति निष्ठा नेहरू का एक मुख्य राजनीतिक सिद्धांत थी और भारत में जनवादी सामाजिक तथा राजनीतिक प्रणाली का निर्माण उनका एक मुख्य उद्देश्य था।

1931 में ही नेहरू ने ''सरकार के दो रूपों'' की चर्चा की थी, ''एक बलप्रयोग पर आधारित है। वह पुलिस व सेना के इस्तेमाल से जनता को आतंकित करके उससे अपना हुक्म मनवाता है। सरकार का दूसरा रूप वह है, जिसमें लोग एक–दूसरे से सलाह–मशविरा करके बलप्रयोग के बिना पंचायती राज की स्थापना करते है। ऐसी सरकार को सेना तथा पुलिस की सहायता की जरूरत नहीं पड़ती।''[1] लगभग तीस साल बाद करंजिया के साथ भेंटवार्ता में उन्होंने अपने इस विचार को दुहराया, जिसे उन्होंने सर्वप्रथम मध्यवर्ती अवस्थाओं के समावेश से कुछ संशोधित कर दिया। ''इस प्रश्न (प्रशासन ओ0 म0) पर दृष्टिकोण के लिए केवल दो मुख्य रास्ते है, यद्यपि उनके बीच मध्यवर्ती अवस्थाएं भी हो सकती हैं। पहला रास्ता, जिसे सत्तावादी रास्ता कहा जा सकता है, यह है कि सरकार या देश में सत्ता अपने हाथों में रखने वाले तथा सरकार का प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्तियों का ग्रुप अपनी इच्छा जनता पर आरोपित करता है। स्वभावतः यह आरोपण व्यापक प्रचार एवं प्रत्यायन के साथ किया जाता है। दूसरा रास्ता जनवादी रास्ता कहा जा सकता है, जिसका अर्थ करने के लिए राजी करके जाग्रत् करना, क्योंकि अंततोगत्वा वे महसूस करते हैं कि यह आजकल नहीं तो, भविष्य में उनके हित में होगा।''[2]

नेहरू ने कहा : ''हम जनवादी विश्वास में करते है, अपनी ओर से मैं इसमें सर्वप्रथम इसलिए विश्वास करता हूं कि यह, मेरे ख्याल में, उद्देश्यों के पाने का सही साधन है और कि यह एक शांतिपूर्ण विधि है। दूसरे, इसलिए कि यह उन दबावों को हटा देता है, जिन्हें सरकार के अन्य रूप व्यक्ति पर आरोपित करते है।[3] उन्हें इस बात पर गर्व था कि भारत दुनिया में विशालतम कार्यकारी जनवाद बना हुआ है।[4] उन्होंने चेताया कि भारत में आज जनवादी विधियों को ठुकाराने का कोई भी प्रयास बिनाश की ओर ले जायेगा तथा इस तरह प्रगति की किसी भी निकटवर्ती संभावना को समाप्त कर देगा।[5]

***शोध छात्रा, वीर बहादुर सिंह विश्वविद्यालय, जौनपुर, उ0 प्र0**

नेहरू ने संसदीय पद्धति के साथ–साथ जनवाद के अन्य ऐतिहासिक रूपों से भी इंकार नहीं किया। मिसाल के लिए, वह मानते थे कि अफ्रीकी इतिहास ने विभिन्न प्रकार के जनवाद दिये है। जहां तक यूरोप में विकसित जनवादी संस्थाओं का संबंध है, वह उनके आदर्शीकरण के बहुत दूर थे। उन्होंने जनवाद के प्रश्न को पंडिताऊ ढंग से न लेने और 19वीं सदी के आंग्ल मानकों को आधुनिक भारत पर न लागू करने की अपील की। इसमें वह भारत की केवल राष्ट्रीय–ऐतिहासिक विशिष्टताओं से कदापि नहीं मार्गदर्शित हुए, बल्कि बुर्जुआ संसदीय जनवाद के सिद्धांतों से उस निराशा से निर्दिष्ट हुए, जो 18वीं और 19वीं सदियों के भ्रमों के बाद हुई थी। चौथे दशक में नेहरू ने लिखा ''जनवाद 19वीं सदी का महान आदर्श इस हद तक रहा है कि इस संपूर्ण सदी को जनवाद की सदी भी कहा जा सकता है। जनवाद वयस्क मताधिकार ओ0 म0 अंततः विजयी हुआ, तथापि, जब तक यह ध्येय पाया गया, तब तक लोग उसमें अपना विश्वास खोने लगे थें उन्होंने देखा कि वह निर्धनता और अभाव तथा पूंजीवादी प्रणाली के कई अंतर्विरोधों का खात्मा करने में असमर्थ रहा था।''[6]

जनवाद पर नेहरू के विचारों के मजबूत पक्ष पश्चिमी बुर्जुआ राजनीतिक प्रणाली की उनकी आलोचना से अविच्छेद्यतः जुडे हुए थे। तीसरे और चौथे दशक में यह आलोचना विशेषतः तीव्र थी। उन दशकों में नेहरू ने बुर्जुआ राजनीतिक प्रणाली के जो मूल्यांकन दिये, उन्हें यहां उद्धत करने की आवश्यकता नहीं हे, क्योंकि वह अंशतः राज्य तथा पूंजीवाद के स्वरूप पर उनके विचारों की व्याख्या के संबंध में किया गया था। हम यहां 1919 में की गयी सिर्फ एक आलोचना को उद्धत करेंगे। यह बरट्रन्ड रसल की पुस्तक स्वाधीनता के मार्ग की नेहरू की अधूरी समीक्षा में बुर्जुआ जनवा का घातक चरित्रचित्रण है ''आज के जनतंत्र ने जो पूंजी, संपत्ति, सैन्यवाद और अधिक बढ़ी हुई नौकरशाही के अपवित्र गंठबंधन के तहत पूंजीवादी प्रेस की सहायता से चलाया जाता है, एक भ्रम और फंदा सिद्ध हुआ है। यह उतना ही दबंग, जुझारू, अंधराष्ट्रवादी है, जितना कि स्वैरतंत्र या कुबेरतंत्र, जो इसके पूर्वतर्वी थे। लेकिन यह जनतंत्र का दोश नहीं है। बल्कि यह तो उन बहुपक्षीय प्रभावों की बदौलत है, जिन्हें पूंजीपति वर्तमान व्यवस्था के अंतर्गत मिटाने वाले व्यक्तियों के पूरे के पूरे जमघट की सहायता और शह से पश्चिम की सरकारों पर डालते हैं। हमारे समक्ष समस्या है जनत्रत को उनके अहितकर प्रभावों से मुक्त कराना।''[7]

नेहरू ने कहा कि जनवाद ने पूंजीवादी समाज की मुख्य समस्याओं को हल नहीं किया है। अभी भी जनवाद ओर पूंजीवाद के सिद्धांतों के बीच टकराव है।[8] यह उनके विचार में, पहले विश्व युद्ध के बाद जनवाद और सांसदों के पतन या विघटन की ओर ले गया।

लेकिन नेहरू ने बुर्जुआ जनवाद के सीमित और अपर्याप्त स्वरूप संबंधी विचार को नहीं छोड़ा। तीसरे और चौथे दशकों में वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि यदि राजनीतिक जनवाद आर्थिक व सामाजिक जनवाद पर न ले जाये, तो वह निरर्थक है। उन्होंने लिखाः ''जनवाद की सीमाओं को व्यापक बनाना होगा, ताकि उसके भीतर आर्थिक समानता भी आ जाये। यह एक महान क्रांति है, जिससे हम सभी गुजर रहे है आर्थिक समानता सुनिश्चित करने और इस तरह जनवाद को उसका पूर्ण अर्थ प्रदान करने तथा हमें विज्ञान और प्रोद्योगिकी के आधुनिक स्तर पर लाने की क्रांति।[9]

नेहरू के लिए राजनीतिक जनवाद सामाजिक समस्याओं को सुलझाने का एक साधन है। बाडेनवेलर को 1936 में एक पत्र में इस संबंध में उन्होंने लिखाः ''व्यक्तिगत रूप से मैं राजनीतिक जनवाद को सिर्फ इस आशा में स्वीकार करने के लिए पूर्णतः तत्पर हूं कि वह सामाजिक जनवाद की ओर ले जायेगा। राजनीतिक जनवाद ध्येय का केवल एक मार्ग है, नकि वह अंतिम ध्येय है। इसके लिए यथार्थ तकाजा, आर्थिक परिवर्तनों की इच्छ–कभी–कभी अनजाने से आती है। अगर ये परिवर्तन शीघ्रातिशीघ्र नहीं आते, तो राजनीतिक संरचना संभवतः अस्थिर हो जायेगी।''[10]

स्वतंत्रता के वर्षो में नेहरू ने राजनीतिक जनवाद को सामाजिक जनवाद से पूरित करने की आवश्यकता पर पूर्ववत् जोर डालना जारी रखा। 1963 में उन्होंने कहा : ''समाजवाद जनवाद का अनिवार्य परिणाम है। यदि राजनीतिक जनवाद अपने में आर्थिक जनवाद को सम्मिलित न करे तो वह कोई अर्थ नहीं रखता। और आर्थिक जनवाद समाजवाद के अलावा और कुछ नहीं है।''[11] लेकिन चूंकि युद्धोत्तर काल में नेहरू क्रांतिकारी से सुधारवाद की ओर मुड़े, इसलिए आर्थिक जनवाद, या बल्कि उसके क्रियान्वयन की गति और विधियों की उनकी समझ बड़े परिवर्तन से गुजरी।

बेशक वर्गहीन समाज के निर्माण का अंतिम ध्येय बना रहा, लेकिन नेहरू ने स्वीकार किया कि वह एक बहुत दूरवर्ती आदर्श सिद्ध हो सकता है। तब तक के लिए नेहरू ने अधिक नरम, मध्यवर्ती ध्येय पेश किये, जिन्हें उन्होंने चौथे दशक में आर्थिक व सामाजिक जनवाद के एक लक्षण के रूप में मुश्किल से ही स्वीकार किया होता। लेकिन युद्ध के बाद उनमें सही दिशा में क्रमिक अग्रगति के रूप में उनकी व्याख्या करने का रूझान था। 1957 में उन्होंने कहा राजनीतिक जनवाद से हम आर्थिक जनवाद की धारणा की ओर आगे बढ़ते है। सर्वप्रथम, इसका अर्थ है सबके लिए एक निश्चित हद तक कल्याण हेतु काम करना इसे कल्याणकारी राज्य कह लीजियें। दूसरा, इसका है आर्थिक क्षेत्र में एक निश्चित हद तक समान सुअवसर

केलिए काम करना।[12] स्वभावतः यह सामाजिक और आर्थिक जनवाद को समाजवाद से तद्रूपित करने से बहुत दूर है, जिसे नेहरू ने तीसरे और चौथे दशकों में किया था और जिसे उन्होंने अपने जीवन के अंत तक एक आदर्श के रूप में माना था।

नेहरू के लिए जनवाद के मूल्यांकन की कसौटी यह प्रश्न था कि राजनीतिक जनवाद अपने–आप में सामाजिक तथा आर्थिक जनवाद की प्रत्याभूति है या नहीं।

इस प्रश्न के समाधान के लिए नेहरू ने युद्ध के बाद बुर्जुआ या सामाजिक जनवादी सुधारवाद के पक्ष में एक बड़ा डग भरा। इसके साथ ही उन्होंने उन पुलों को भी नहीं जलाया, जिन्होंने पहले उन्हें कांतिकारी शक्तियों से जोड़ा था।

नेहरू के विचार में, वे सभी राज्य, जहाँ राजनीतिक जनवाद का अस्तित्व होता है, आर्थिक जनवाद की दिशा में बढ़ते हैं। लेकिन इस धारणा की उन्होंने एक बहुत ही संकीर्ण व्याख्या दी। लेकिन साथ ही साथ वह यह भी महसूस करते थे कि निर्वाचकों को सही या गलत ढंग से प्रभावित करने की विधियां भी है। आखिरकार, मताधिकार रखने वाले एक दरिद्र और मताधिकार रखनेवाले एक करोड़पति के बीच कोई समानता नहीं हैं। करोड़पति के पास प्रभाव डालने के सैकड़ों तरीके है, जबकि दरिद्र के पास इसके लिए कुछ नहीं होता है।

नेहरू का ख्याल था कि राजनीतिक जनवाद को अनिवार्यतः आर्थिक जनवाद की ओर ले जाना चाहिए। यहां आशय इस प्रक्रिया की अनिवार्यता से है, न कि उसकी प्रत्याभूति से। नेहरू ने इस संभावना को अस्वीकार नहीं किया कि राजनीतिक जनवाद सामाजिक न्याय तथा समानता को सुनिश्चित करने में असमर्थ सिद्ध हो सकते है और तब राजनीतिक प्रणाली अपनी स्थिरता खो देती है। जो भी हो, नेहरू न`राजनीतिक जनवाद की समाजिक–आर्थिक क्षमता को सार्विक मताधिकार व संसदीय संस्थाओं के औपचारिक कार्यो से नहीं, बल्कि राजनीतिक जीवन में जनता की सक्रिय और चेतनशील भागीदारी से संबंधित किया। नेहरू ने वास्तविक, न कि औपचारिक राजनीतिक जनवाद को भारत में दूरगामी सामाजिक रूपांतरणों के कार्यान्वयन के एक साधन के रूप में माना। उन्होंने प्रगतिशील जनवाद की भी बात की और कहा कि वह सामाजिक समानता की स्थापना के मार्ग पर सभी बाधाओं को हटा देगा तथा परस्पर समझ तथा सहयोग की खोज से वांछित उद्देश्य के न मिलने पर राज्य ओर कानून द्वारा दबाव का सहारा लेगा।

नेहरू ने संसदीय जनवाद को निजी संपत्ति और निजी उद्यम की रक्षा से तद्रूपित करने के प्रयासों का दृढ़तापूर्वक विरोध किया। कभी–कभी कहा जाता है कि संसदीय जनवाद निजी उद्यम की प्रणाली से अनिवार्यतः जुड़ा हुआ है लेकिन मैं संसदीय जनवाद और निजी उद्यम में कोई संबंध नहीं देखता। नेहरू ने जनवाद को

निज उद्यम की अराजकता को सीमित और विनियमित करने, पूंजीवाद पर प्रहार करने के लिए साधन प्रदान करना आवश्यक समझा। उन्होंने कहा कुछ लोग सोचते हैं कि जनवादी संरचना राज्य के हस्तक्षेप के बिना निजी उद्यम की पूर्णतः स्वाधीन गतिविधि की आवश्यक रूप से कल्पना करती है। इस कल्पना का कोई तर्क या औचित्य नहीं है। नेहरू ने जोर दिया कि जनवाद की उनकी धारणा न केवल संपेम्र. पितम के पुराने पड़ चुके आर्थिक सिद्धांत की स्वीकृति की द्योतक नहीं है, बल्कि उसकी पूर्ण अस्वीकृति है। उन्होंने भारत के दक्षिणपंथी हलकों के इस विचार को भी अस्वीकार किया कि समाजवाद से जनवाद को खतरा है। उल्टे, उन्होंने जनवाद को समाजवादी समाज के निर्माण के एक साधन में बदलने की चेष्टा की।

नेहरू ने समाजवाद की ओर ले जानेवाले ओजस्वी या प्रगतिशील जनवाद के आने विचारों को गंभीर रूप से विकसित नहीं किया। यह तभी संभव था, यदि उन्होंने समस्या के प्रति वर्ग दृष्टिकोण अपनाया होता, लेकिन अपने जीवन की अंतिम अवधि में नेहरू इस दृष्टिकोण से अधिकाधिक दूर होते गये। ओजस्वी जनवाद जनता के क्रांतिकारी उत्साह का तकाजा करता है। नेहरू ने ऐसे वातावरण के निर्माण के लए कुछ नहीं किया। लेकिन सामाजिक न्याय की ओर ले जाने वाले इस जनवाद के प्रश्न का स्वयं निरूपण इस बात का प्रमाण था कि उनके विचार पारंपरिक सामाजिक–सुधारवाद से भिन्न थे और वह भारत में प्रगति के हित में राजनीतिक प्रणाली के आगे विकास के लिए संघर्ष की संभावना खोलना था।

सच्चे जनवाद के सामाजिक–आर्थिक पक्षों को प्रदर्शित करने के अलावा नेहरू ने उसकी राजनीतिक अंतर्वस्तु के बहुविध स्वरूप पर कोई कम ध्यान नहीं दिया।

इस प्रकार जनवादी विधि दूसरे पक्ष के विचारों को समझने की कोशिश, ले–देकर मामले को निपटाने, अंतिम निर्णय के संबंध में अपने को अनूकूल बनाने की अनिवार्यतः पूर्वकल्पना करती है। लेकिन वह अल्पसंख्या से भी कुछ तकाजा करती है। जनवाद स्वतंत्र अभिव्यक्ति और विचार स्वतंत्रता को सुनिश्चित करते हुए कुछ और चीजों का जो तकाजा करता है। वह इसके बाद संयुक्त कार्रवाई का तकाजा करता है। वह स्वीकृत निर्णयों को मान्यता का तकाजा करता है।

नेहरू ने सहिष्णुता को जनवाद की एक मुख्य विशिष्टता के रूप में पेश किया। उन्होंने कहा : ''जनवाद का अर्थ है सहिष्णुता केवल उन लोगों के प्रति सहिष्णुता नहीं जो हमसे सहमत है, बल्कि उन लोगों के प्रति भी सहिष्णुता, जो हमसे सहमत नहीं है। जनवाद के अनुरूप अनुशासन भी होना चाहिए और जिस हद तक सचेतन अनुशासन, यानी आत्मानुशासन विवशकारी अनुशासन का स्थान लेता है वह जनवाद का मापदंड और कसौटी है। नेहरू के अनुसार, जनवाद अनुशासन को आत्मानुशासन में बदल देता है। आत्मानुशासन का अर्थ यह है कि

वे लोग तक अल्पसंख्या–फैसलों को स्वीकार करते हैं जो उनसे सहमत नहीं होते, क्योंकि टकराव पर जाने की अपेक्षा उन्हें स्वीकार करना बेहतर है। उन्हें स्वीकार करना और फिर आवश्यक होता शांतिपूर्ण विधियों से बदलना बेहतर है।''[13]

अतः जनवादी प्रणाली की एक दूसरी परिभाषा दी जाती है। ''मेरी लिए जनवाद का अर्थ शांतिपूर्ण विधियों से समस्याओं के समाधान का प्रयास करना है। यदि यह शांतिपूर्ण नहीं है, तो मेरे विचार में, यह जनवाद नहीं है। नेहरू ने जनवाद को शांतिपूर्ण विधियों से तद्रूपित किया। शांतिपूर्ण प्रगति की विधि अंततोगत्वा जनवादी प्रगति की विधि है, उन्होंने कहा। इस तरह उन्होंने न केवल अहिंसात्मक प्रतिरोध के शास्त्रागार, बल्कि जनवाद की धारणा को भी क्षीण बनाया। ऐसा प्रतीत हो सकता है कि यहां आशय सिर्फ राजनीतिक प्रणाली के सामान्य कार्यान्वयन से है। लेकिन नेहरू ने दावा किया कि जनवाद की स्थापना के लिए प्रयास केवल शांतिपूर्ण विधियों से ही किये जा सकते है।

नेहरू का ख्याल था कि जनवादी प्रणाली की एक मुख्य विशिष्टता उसका धर्मनिरपेक्ष स्वरूप है। इस प्रश्न पर उन्होंने बड़ी सुसंगति दिखायी और धार्मिक पूर्वाग्रहों को राजनीतिक जीवन से सावधानीपूर्वक मिटाने का प्रयास किया। उन्होंने राज्य की नीति पर प्रभाव बढ़ाने के सैनिक हलकों के प्रयासो के प्रति जागरूकता प्रकट की और कहा कि ये प्रयास जनवाद की भावना का खंडन करते है। उन्होंने जोर दिया कि भारत में नागरिक सरकार की प्रधानता हमेशा बनी रहनी चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. Selected Works of J. Nehru, Vol. 5, P. 82.
2. R. K. Karanjia, The Mind of Mr. Nehru, P. 71.
3. J. Nehru's Speeches, Vol. 3, P. 139.
4. Ibid., Vol. 5, P.
5. J. Nehru's India Today and Tomorrow, Indian Council for Cultural Relations, New Delhi, 1960, P. 39.
6. J. Nehru, Glimpses of World History, P. 405.
7. Selected Works of J. Nehru, Vol. 1, P. 143
8. J. Nehru's An Autobiography, PP. 529-530.
9. J. Nehru, Glimpses of World History, P. 427.
10. J. Nehru, A Bunch of Old Letters, P. 143.
11. Address to the AICC Session, Jaipur (1963), AICC Economic Review, Vol. XV, Nos. 14 and 15, Jan. 9, 1964, P. 46.
12. J. Nehru's Speeches, Vol. 4, P. 70.
13. Ibid., P. 139.